IJAER/ March-April 2020/Volume-9/Issue-2 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

रामचंद्र सूरि के समय में सामाजिक व्यवस्था का अध्ययन

जयश्री जोशी
शोधार्थी संस्कृत विभाग, कुमाऊं विश्वविद्यालय नैनीताल

डॉक्टर राघव कुमार झा
मार्गदर्शक संस्कृत विभाग श्री राधे हरि राजकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय काशीपुर
कुमाऊं विश्वविद्यालय नैनीताल

सार

रामचंद्रसूरी ने श्वेतांबर जैन धर्म के तप गच्चा उप–संप्रदाय के एक आदेश, रामचंद्रसूरी समुदाय की स्थापना की। गच्छाधिपति, समुदाय के प्रमुख, हेम्बभूषणसुरी का 2008 में दिल्ली में निधन हो गया। 29 मार्च 2011 को, पुण्यपालसुरी को पलिताना, गुजरात में एक नए गच्छाधिपति के रूप में नियुक्त किया गया है। यह नाटको ं से संबंधित सबसे प्राचीनतम् ग्रंथ है। नाट्य शास्त्र को 300 ई०पू० भरतमुनि ने लिखा था। जिनका जन्म 400 से 100 ईशा पूर्व के मध्य हुआ था। नाट्यशास्त्र में नाट्य कला एवं शास्त्रीय संस्कृत रंगमंच के सभी पहलुओं का वर्णन है। नाट्यशास्त्र के अध्यायों में नृत्य, संगीत, कविता एवं सामान्य सौंदर्यशास्त्र सहित नाटक की सभी भारतीय अवधारणाओ ं में समाहित हर प्रकार की कला पर विस्तार से विचार–विमर्श किया गया है। संगीत, नाटक और अभिनय के सम्पूर्ण ग्रंथ के रूप में भरतमुनि के नाट्य शास्त्र का आज भी बहुत सम्मान है। नाट्य शास्त्र का मूल महत्व भारतीय नाटक को जीवन के चार लक्ष्यों धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के प्रति जागरूक बनाने के माध्यम के रूप में इसका औचित्य सिद्ध करना है। नाट्य शास्त्र में केवल नाट्य रचना के नियमों का आकलन नहीं होता बल्कि अभिनेता, रंगमंच और प्रेक्षक इन तीनों तत्वों की पूर्ति के साधनों का विवेचन होता है।

मुख्य शब्द : *रामचंद्र सूरि , सामाजिक*

प्रस्तावना

नाट्यशास्त्र में नाटक से संबंधित शास्त्रीय जानकारी होती है। यह नाटकों से □□□□□□□ सबसे प्राचीनतम् ग्रंथ है। नाट्य शास्त्र को 300 ई०पू० भरतमुनि ने लिखा था। जिनका जन्म 400 से 100 ईशा पूर्व के मध्य हुआ था। नाट्यशास्त्र में नाट्य कला एवं शास्त्रीय संस्कृत रंगमंच के सभी पहलुओं का वर्णन है। नाट्यशास्त्र के अध्यायों में नृत्य, संगीत, कविता एवं सामान्य सौंदर्यशास्त्र सहित नाटक की सभी भारतीय अवधारणाओ ं में समाहित हर प्रकार की कला पर विस्तार से विचार–विमर्श किया गया है। संगीत, नाटक और अभिनय के सम्पूर्ण ग्रंथ के रूप में भरतमुनि के नाट्य शास्त्र का आज भी बहुत सम्मान है। नाट्य शास्त्र का मूल महत्व भारतीय नाटक को जीवन के चार लक्ष्यों धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के प्रति जागरूक बनाने के माध्यम के रूप में इसका औचित्य सिद्ध करना है। नाट्य शास्त्र में केवल नाट्य रचना के नियमों का आकलन नहीं होता बल्कि अभिनेता, रंगमंच और प्रेक्षक इन तीनों तत्वों की पूर्ति के साधनों का विवेचन होता है। नाट्यशास्त्र के 36 अध्यायों में नाट्य कला एवं शास्त्रीय संस्कृत रंगमंच के अभिनेता, अभिनय, नृत्यगीतवाद्य, दर्शक, दशरूपक और रस निष्पत्ति से सम्बन्धित सभी तथ्यों का विवेचन किया है। भरतमुनि के नाट्य शास्त्र

के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि नाटक की सफलता केवल लेखक की प्रतिभा पर आधारित नहीं होती बल्कि विभिन्न कलाओ ं और कलाकारो ं के सम्यक सहयोग से ही होती है।

नाट्यशास्त्रमिदं रम्यं मृगवक्त्रं जटाधरम।
अक्षसूत्रं त्रिशूलं च विभ्राणंाच त्रिलोचनम।

परंपरा के अनुसार नाट्यशास्त्र के प्रणेता ब्रह्मा माने गए हैं और इसे 'नाट्यवेद' कहकर नाट्यकला को विशिष्ट सम्मान प्रदान किया गया है। यह न सिर्फ नाट्य संबंधी नियमों की
संहिता का नाम है बल्कि विविध मनोविज्ञान समेटे हुए है ।यह ग्रन्थ सम्पूर्ण विश्व में नाटक, नृत्यकला, संगीतकला, मंचकला तथा ललित कलाओ ं को समझाने के लिए अतिशय महत्वपूर्ण ग्रंथ है। नाट्यशास्त्र का रचनाकाल, निर्माणशैली तथा बहिःसाक्ष्य के आधार पर ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी के लगभग स्थिर किया गया है जबकि कुछ विद्वान् इसे 5वी शताब्दी ईसा पूर्व का मानते हैं इसका मूलग्रन्थ भी नाट्यशास्त्र के नाम से जाना जाता है जिसके रचयिता भरत मुनि थे। जिनका जीवनकाल 400–100 ईसापूर्व के मध्य निर्धारित किया जाता है।संगीत, नाटक और अभिनय के सम्पूर्ण ग्रंथ के रूप मे ं भरतमुनि के नाट्य शास्त्र का आज भी बहुत सम्मान है। भरत मुनि मानते थे कि नाट्य शास्त्र में केवल नाट्य रचना के नियमों का आकलन नहीं होता बल्कि अभिनेता, रंगमंच और प्रेक्षक इन तीनों तत्वों की पूर्ति के साधनों का विवेचन होता है। 36 अध्यायों में भरतमुनि ने रंगमंच, अभिनेता, अभिनय, नृत्यगीतवाद्य, दर्शक, दशरूपक और रस निष्पत्ति से सम्बन्धित सभी तथ्यों का विस्तृत विवेचन किया है।नाट्य शास्त्र के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि नाटक की सफलता केवल लेखक की प्रतिभा पर आधारित नहीं होती बल्कि विभिन्न कलाओ ं और कलाकारो ं के सम्यक के सहयोग से ही होती है।भारतीय शास्त्रीय नृत्य, नाट्यशास्त्र से प्रेरित हैं।

उद्देश्य

1 नाट्य शास्त्रीय का अध्ययन करना
2 रामचंद्रसूरी कृत नल विलास नाटकम का अध्ययन करना

नाट्यशास्त्र का परिचय

नट् धातु से नाट्य शब्द बना है जिसका अर्थ होता है गिरना–नाचना। कला का उत्कृष्ट रूप काव्य है और उत्कृष्टतम रूप नाटक है। भरतमुनि का नाटय–शास्त्र सबसे प्राचीन ग्रन्थ है, जो अपनी विचारों के साथ साथ व्यापक विषयगत समग्रता से परिपूर्ण है। भारतीय नाट्य कला पर विचार करते समय नाट्यशास्त्र सदा आगे आ जाता है। यह महान ग्रन्थ नाट्यकला के अतिरिक्त काव्य, संगीत, नृत्य, शिल्प तथा अन्य ललित कलाओं का भी विषयगत कोष है।
नाट्यशास्त्र ग्रन्थ ने भारत की रंगमच्चीय कला को शताब्दियों से प्रभावित कर रखा है –
क्योकि इस अकेले ग्रन्थ में नाट्य विषयक विवरण जितनी तन्मयता के साथ प्रस्तुत हुआ हैं वह अन्य किसी उत्तरकालीन ग्रन्थ में दुर्लभ ही है। तत्कालीन संसार के किसी अन्य ग्रन्थ में भी प्राप्त नहीं होता। इसका कारण यह भी है कि भारतीयनाटयकला की नाटयशास्त्र को
छोडकर कल्पना करना सम्भव ही नहीं हैं और प्राचीन भारत में व्यबहत नाटयकला के स्वरूप तत्व तथा प्रकृति को पूर्णतः हृदयागं करने के लिए एकमात्र नाट्यशास्त्र ही आधार है।

नाट्यशास्त्र में नाट्य तथा रंग से सम्बद्ध काव्य, शिल्प, सगीत, नृत्य आदि ललित कलाओ ं का व्यापक विवरण दिया गया है। तथा अनेक प्रकार की शास्त्रों, शिल्पों, कलाओं, तथा प्रयोगो की चर्चा की गयी है। इस ग्रन्थ की विविधता ने इसे काव्य नाट्य शिल्प तथा ललित विधाओं का विश्वकोष बना
दिया। इस नाट्यशास्त्र में भरतमुनि ने नाट्यकला को व्यवस्थित कर जो स्वरूप प्रदान किया है। वह इतना व्यापक तथा सूक्ष्म तात्विक हुआ कि परवर्ती आचार्यों को इसी के प्रभाव तथा छाया में आकर ही अपना विश्लेषण प्रस्तुत करना पड़ेगा। भरतमनि के नाटय सिद्धान्तों मे ं मौलिकता एवं व्यापकता का ऐसी बीज है जिनकी शाश्वती स्थिति आज भी देखी जा सकती है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में चतुर्विध अभिनय का सिद्धान्त, गीत, एवं वाद्यविधि, पात्रो ं की विविध प्रकार की प्रकृति तथा भूमिका आदि का विवेचन विश्व की किसी भी उन्नत नाट्य कला से कम नहीं है। भरतमुनि के द्वारा रचित नाट्यशास्त्र ने शाश्वत भारत का ऐसा स्वरूप उपस्थित किया जिर काव्य, नाट्य, संगीत, तथा नृत्य जैसी सुकुमार ललित कलाओ ं के द्वारा मानव के शाश्वत जीवन की कल्पना की गयी है। नाट्यशास्त्र के सांगोपांग वर्णन से नाट्यशास्त्र को जो अप्रतिम स्वरूप प्रदान किया है। वह आज तक अक्षुण्ण है। भरतमुनि ने भारत की समस्त चेतना कला को अपनी प्रतिभा के द्वारा निर्माण किया था जिसका कीर्तिस्तम्भ नाट्यशास्त्र है।

भरतमुनि के अनुयायी धनंजय ने 'दशरूपक' में नाट्य की परिभाषा इस प्रकार दी है– 'अवस्थानुकृतिर्नाट्यम' अर्थात् अवस्था की अनुकृति नाट्य है। इस परिभाषा में उन्होंने स्पष्टतः अभिनय को महत्त्व दिया है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल लिखते हैं– तात्त्विक दृष्टि से ही नाटक और ड्रामा में मूलभूत अन्तर ही नहीं, विरोध है। नाटक अवस्था की अनुकृति है–अर्थात् इसमें अवस्था की ऐसी प्रस्तुति (प्रदर्शन नहीं) है, जिसमें सारा बल कृतित्त्व पर है। ड्रामा, अवस्था नहीं, बल्कि प्रकृत को उसके सामने दर्पण रखकर उसमें सन्निहित नैतिकता के चेहरे को दिखाना है और उसकी वास्तविकता का मजाक करना है।' वे निष्कर्षतः कहते हैं– हमारे नाटक में अनुकृति है तो पश्चिम के ड्रामा में 'इमीटेशन' अर्थात् अनुकरण है। फलतः उनके ड्रामा में प्रस्तुति के स्थान पर प्रदर्शन का तत्त्व प्रबल है। स्पष्ट है कि 'नाट्य' को भारतीय साहित्य में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है। रंगभूमि पर अभिनय द्वारा रचना या कृति की अवस्थाओ ं की अनुकृति नट या अभिनेता करता है और यही व्यापार नाट्य है जो अपनी व्यापकता और रसवत्ता के कारण लोकरंजनकारी और लोक का मनोविनोदकर्ता सिद्ध होता है।

विलास शब्द का अर्थ: वि उपसर्गपूर्वक लस् धातु(शोभा) से घञ् प्रत्यय लगने से विलास
शब्द बनता है द्य जिसका अर्थ है सौन्दर्य से सम्पन्न क्रिया अर्थात् सौन्दर्ययुक्त क्रिया के भाव को विलास कहते है द्य सौन्दर्य काव्य का अपरिहार्य भाव है द्य सौन्दर्य के बिना काव्य की कल्पना करना संभव नहीं द्य वैसे तो काव्य सौन्दर्यसंपन्न होता है. परन्तु विलास काव्यों में कवि विशेष रूप से प्रकृति के अत्यंत सूक्ष्म भावों को अपनी भावयित्री एवं कारयित्री प्रतिभा के संयोग से रमणीय बना देता है द्य कवि की लेखनी का संसर्ग पाकर लोक में अत्यन्त गर्हित जगप्सा भय आदि से युक्त पदार्थ भी सौन्दर्यसंपन्न बन जाते है द्य अतः विलास काव्यों के अंतर्गत कवि के मानसिक विचारो ं तथा प्रकृति दोनों सौन्दर्य का अद्भुत सम्मिश्रण दृष्टिगत होता है। संस्कृतसाहित्य की परंपरा अतीव समृद्ध रही है द्य विलास काव्यों का सृजन प्राचीन आचार्यों ने भी किया और उसी परम्परा का निर्वाह करते हुए आधुनिक आचार्य भी विलास काव्यों की रचना कर रहे है संस्कृतसाहित्य में विलाससंज्ञक काव्यों का कालक्रमानुसार अध्ययन किया है।

रामचंद्रसूरी

रामचंद्रसुरी का जन्म 3 मार्च 1896 (फाल्गुन वाद 4, विक्रम संवत 1952) को पडारा गाँव (अब गुजरात में) में हुआ था। वे आचार्य श्री प्रेम सुरीश्वरजी के शिष्य थे और 1912 में (पुष्य वड 13, वी.एस. 1969) में गांधार (अब गुजरात मेें) में मुनि मंगलविजयजी द्वारा भिक्षुणी मे ं दीक्षा दी गई थी। 1991 में उनकी मृत्यु हो गई (आषाढ़ वाद 15, वीएस 2047)। बेहतर स्रोत की आवश्यकता, तपस्या में उनकी दीक्षा की शताब्दी 2012 में पलिताना, अहमदाबाद, मुंबई और गांधार में मनाई गई थी। रामचंद्रसूरी ने श्वेतांबर जैन धर्म के तप गच्चा उप–संप्रदाय के एक आदेश, रामचंद्रसूरी समुदाय की स्थापना की। गच्छाधिपति, समुदाय के प्रमुख, हेम्बभूषणसुरी का 2008 में दिल्ली में निधन हो गया। 29 मार्च 2011 को, पुण्यपालसुरी को पलिताना, गुजरात में एक नए गच्छधिपति के रूप में नियुक्त किया गया है।

नलविलासनाटकम्: यह रामचन्द्र सूरी विरचित है द्य जिनका समय १२वी शताब्दी का मध्यभाग हैद्य इस नाटक में सात अंक हैद्य जिसमे निषध नरेश नल और दमयंती की प्रेम कथा का वर्णन प्रस्तुत किया गया है ।

राज्याश्रय

रामचन्द्र सुरि को सिद्धराज जयसिंह और कुमारपाल का राज्याश्रय प्राप्त था। रामचन्द्र सुरि के के गुरु जैन आचार्य हेमचंद्र थे।

रुपक

- सत्यहरिश्चन्द्र नाटक – पुराणों आधारित इस नाटक में हरिश्चन्द्र की कथा दी गई है।
- नलविलास नाटक – महाभारत आधारित इस कथा में दमयंती विवाह से नल को पुनः राज्यप्राप्ति का वर्णन मिलता है।
- रघुविलास नाटक – राम वनवास से रावण वध की कथा दी गई है।
- राघवाभ्युदय नाटक – इसमें सीता स्वयंवर से रावण वध की कथा दी गई है।
- यादवाभ्युदय नाटक – इसमें कंसवघ , जरासंघ वघ और कृष्ण के अभिषेक की कथा दी गई है।
- यदुविलास नाटक – यह नाटक अप्राप्य है।
- कौमुदीमित्रानंद प्रकरण – कौमुदी और मित्रानंद के विवाह की कथा इसमे दी गयी हैं।
- रौहिणीमृगांक प्रकरण – यह नाटक अप्राप्य है।
- मल्लिकामकरंद प्रकरण – कथासरित्सागर के कथानक अनुसार इस नाटक में मल्लिका और मकरंद का विवाह होता है।
- निर्भयभीम व्यायोग – इसमें भीम द्वारा वनवास में बकासुर को मारने की कथा है।
- वनमाला नाटिका – यह नाटक अप्राप्य है।

काव्य

- सुधाकलश – १३०० श्लोक का सुभाषित ग्रंथ
- कुमारविहार शतक – राजा कुमारपाल की प्रशस्ति।

शास्त्र

- नाट्यदर्पण (गुणभद्र के साथ) – ४ विवेक और २३६ कारिका का नाट्य विषयक ग्रंथ।
- द्रव्यालंकार – जैन न्याय विषयक ग्रंथ।
- हेमबृहत्वृत्तिन्यास – व्याकरण विषयक ग्रंथ।

सामाजिक परिस्थिति

देश की सामाजिक स्थिति पर राजनीतिक और धार्मिक परिस्थितियों का गहरा प्रभाव रहा है । जनता विदेशियों के आने से एक प्रकार से परिवर्तन का सामना करती है । समाज में हलचल मचा जाता है । विदेशियों का हिन्दू साहित्य में घुलमिल जाने से नई जातियों का उदय हुआ । राजपुत जातियों का उदय कुछ इस प्रकार से हुआ है । राजपुतों के पास सत्ता होने के कारण उनका दबादबा समाज में बढ़ा । इससे ब्राह्मण वाद को खतरा महसूस होने लगा । इसलिए उन्होंने वर्णवाद की कट्टरता को थोड़ा सहज बना दिया । इधर राजपुत को क्षत्रिय की संज्ञा मिली । ब्राह्मणों ने राजपुतों को नैतिक औचित्य प्रदान किया । इसका सीधा असर समाज पर पड़ा । दूसरे वर्ग के लोग ब्राह्मणवाद को चुनौती देने की मुद्रा में खड़े होने लगे । इसका उदाहरण सिद्ध, नाथ और जैन साहित्य में मिलता है।

जनता धर्म और शासन से निराश हो चुकी थी । युद्ध के समय उसकी हालत अधिक खराब रहती, उसे बुरी तरह पीसा जाता था । वह ईश्वर की ओर देखती तो उसे भ्रम और असहायता की स्थिति मिलती । जाति – पाँति का भेदभाव बहुत बढ़ गया था । ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र– इन चारों वर्णों की प्रधानता थी । अनेक जाति एवं उपजातियों में बँटकर भारत सामाजिक आदर्श खो चुका था । जाति – पाँति का बन्धन और अधिक कसता जा रहा था । भोग का अधिकार उच्चवर्ग को था और निम्नवर्ग श्रम के लिए पैदा हुआ था । जनता के लिए शिक्षा की व्यवस्था नहीं थी । सांप्रदायिक तनाव के कारण नारी और पुरुष के लिए साहित्य और शास्त्र ज्ञान अप्राप्य बना दिया गया था । अंधविश्वासों के दायरे में जनता फँसी हुई थी । साधु संन्यासियों के श्राप और वरदान पर लोगों की दृष्टि थी । जीवन–यापन के सामान्य साधन उपलब्ध नहीं होते थे और निर्धनता सदा जनता को घेरे रहती । नाना प्रकार के पूजा–पाठ, तंत्र–मंत्र तथा जप–तप करके भी लोग महामारी तथा युद्ध जैसे संकट को टाल नहीं पाते थे । नारी की स्थिति भोग्या के रूप में थी । वह मनुष्य नहीं वस्तु बनी हुई थी । नारी का सामाजिक कर्तव्य पुरुष के भोग का साधन बनने तक सीमित था । नारी को मानवीय गरिमा के अनुकूल अधिकार प्राप्त नहीं था । इसके प्रभाव से साहित्य भी अछूत नहीं रहा । जैसे धन प्राप्ति के लिए युद्ध होते थे वैसे ही सुंदर नारी युद्ध का कारण बनी । सांमतों में नारी के प्रति जो दृष्टिकोण था, उसका प्रभाव धर्म पर भी पड़ा । मंदिरों में देवदासियों की प्रथा शुरू हो गयी । यहाँ तक कि बौद्ध धर्म में तांत्रिक संप्रदाय का आरंभ हुआ और वज्रयानियों ने स्त्रियों को लेकर मद्यपान के साथ वीभत्स विधान शुरू किया । इस तरह सामाजिक विषमता में जीनेवाली जनता निरंतर ऐसे विचारों की प्यासी रहती थी जो उसे दिलासा दे सके, मानसिक शांति प्रदान करें । हिन्दी के कवियों ने जनता की इस स्थिति के अनुसार काव्य रचना की ।

उपसंहार

साहित्य के इतिहास लेखन में काल–1 – विभाजन एक जटिल विषय है। काल विभाजन करते हुए सामाजिक विकास की अवस्थाओं के साथ साहित्यिक प्रवृत्तियों की समानता का विचार करना कठिनाई उत्पन्न करता है। यही कारण है प्रायः समाज के इतिहास के युगों के साथ साहित्य के इतिहास के युगों की संगति नहीं दिखाई पड़ती। बहुत हद तक यह संगति रामचन्द्र सुरि का इतिहास में दिखाई पड़ती है। रामचन्द्र सुरि ने हिन्दी साहित्य के इतिहास संस्कृत मे नाटकों की रचना है– रघुविलास नाटक, राघवाभ्युदय नाटक, नलविलास नाटक और मल्लिकामकरंद प्रकरण। रामचन्द्र सुरि के इतिहास की संरचना, उनका काल विभाजन, नामकरण की व्यवस्था और विभिन्न कवियों तथा लेखकों के बारे में उनके मूल्यांकन की परवर्ती आलोचकों द्वारा की गई आलोचनाओं के बावजूद रामचन्द्र सुरि की मान्यताएँ, उनके मूल्य निर्णय और उनकी स्थापनाएँ हिन्दी के पाठकों के साहित्य–बोध का अनिवार्य अंग बनी हुई हैं।

संदर्भ सूचि

1. रामचन्द्र सुरि. तथा एस. हरिश्चन्द्र, 1982 ऑफ़ इंडियारू प्रॉस्पेक्टस फ़ॉर चेंज. परगामॉन प्रेस, ऑक्सफोर्ड ।
2. बासु, श्रीमती, 2011– शी कम्स टू टेक हर राइट्सरू इंडियन वूमैन प्रोपर्टी एण्ड प्रोप्राइटी. काली फॉर वूमैन, नयी दिल्ली।
3. बॉटोमोर, टी.बी., 1975– सोशयोलॉजी एज़ सोशल क्रिटीसीज़्म, जॉर्ज एलेन एण्ड अनविन लि., लंदन।
4. आचार्य हेमचंद्र 1933– द डिवीजन ऑफ़ लेबर इन सोसायटी..द मैकमिलन कंपनी, न्यूयार्क।
5. जयराम, एन. 1987 इंट्रोडक्टरी सोशयोलॉजी. मैकमिलन इंडिया लि., दिल्ली ।
6. हेल सिल्विया, एम. 1990 कॉंट्रोवर्सिस इन सोशयोलॉजीरू ए कनेडियन इंट्रोडक्शन, लोंगमैन ग्रुप्स, लंदन। मार्क्स कार्ल तथा फ्रेडरिक ऐंजेल्स. 1974– द जर्मन आइडियोलॉजी, सिलेक्टेड वर्क्स, भाग–1, पीपुल्सपब्लिशिंग हाउस, मास्को।
7. सेन, अमर्त्य, 1990– श्जेंडर एण्ड कोऑपरेटिव कॉनफ्लिक्ट्सश इन परसिस्टेन्ट इनइक्विलिटीज़ (संपा.), प्, टिंकर, पी.पी. 123–49] ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड ।
8. सिंह, योगेंद्र, 1973– मॉडर्नाइजेशन ऑफ इंडियन ट्रेडिशन. थॉमसन प्रेस, नयी दिल्ली ।
9. श्रीनिवास, एम. एन. 1972– सोशल चेंज इन मॉडर्न इंडिया. ओरियंट लोंगमैन, नयी दिल्ली ।
10. ओम्मेन, टी. के. 1972– करिश्मा, स्टेबिलीटी एण्ड चेंज रू एन ऐनालिसीस ऑफ़ भूदान–ग्रामदान मूवमेंट इन इंडिया. थॉमसन प्रेस, नयी दिल्ली ।
11. वाईट, एस. सी., 1962– आरग्यूइंग विद द क्रोकोडाइल, जेंडर, एण्ड क्लास इन बांग्लादेश. जेड बुक्स, लंदन।